मोदी की राह में मुश्किलें

मनोज कुमार झा

नरेन्द्र मोदी को फ़िक्र है कि उन्हें ऑल इंडिया का लीडर मान लिया जाय। इससे ज़ाहिर है कि वो ऑल इंडिया के लीडर नहीं, महज़ गुजरात के लीडर हैं और उनके दामन पे दंगों के इतने इतने बदनुमा दाग़ हैं कि दुनिया को गुलाम बनाने का मंसूबा पाले अमेरिका भी उन्हें अपने यहां आने की इज़ाज़त देने को तैयार नहीं।

अमेरिका भी तो आख़िर जार्ज वाशिंगटन और अब्राहम लिंकन का रहा है, गोकि दुनिया को 'स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व' जैसा इन्क़लाबी नारा देने वाला वह देश आज ओबामा की लीडरशिप में पूरी दुनिया के लिये ही एक ख़तरा बन चुका है। उसने अफ़गानिस्तान को तबाह किया, इराक को, लीबिया को; ईरान को तबाह करने पर वो आमादा दिखता है, लैटिन अमेरिका को बर्बाद करने की उसने हर चंद कोशिशें की, कैंसर के कीटाणू तक फैला दिए, तो भारत क्या खाकर उसका मुकाबिला करेगा, जिस मुल्क़ का प्राइम मिनिस्टर उसका ताबेदार है। फ़िर भी हैरत की बात तो ये है कि वो भी मोदी को वीज़ा देने को तैयार नहीं, आख़िरकार डेमोक्रेटिक स्टेट होने का मुखौटा भी उसके लिये निहायत ही ज़रूरी है ताकि वो दुनिया के सामने एक सनद पेश कर सके कि वह आतंकवादियों के ख़िलाफ़ है। क्या विडंबना है कि आतंकवाद की विषबेल को खाद-पानी देने वाले अमेरिकी शासकों ने हिटलर बनने का मंसूबा पाले नरेन्द्र मोदी को दुत्कार दिया। बावजूद इसके, मोदी बाज नहीं आये और वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग के जरिये अमेरिका में रहने वाले गुजरातियों को संबोधित किया। लेकिन अभी तो भाजपा में भी उनको सर्वसम्मत लीडर नहीं माना जा रहा है।

भाजपा के वरिष्ठतम नेता लालकृष्ण आडवाणी ने खुलकर अपनी ही पार्टी की आलोचना कर डाली है। उन्होंने कहा है कि भाजपा जनता की उम्मीदों पर खरी नहीं उतर पाई। साथ ही, उन्होंने यह भी कहा कि भ्रष्ट नेताओं के कारण भाजपा की छवि दागदार हुई है। यद्यपि उन्होंने किसी का नाम नहीं लिया, पर स्पष्ट है कि वे येदियुरप्पा और भाजपा के पूर्व अध्यक्ष नितिन गडकरी पर निशाना साध रहे थे। इससे गडकरी के समर्थक बौखला-से गए हैं। संघ भी आडवाणी से नाराज है और यह नाराजगी पुरानी है। आडवाणी को भी संघ की नाराजगी की परवाह नहीं है। जिन्ना प्रकरण के बाद संघ के लगातार दबाव के बाद जब आडवाणी ने भाजपा अध्यक्ष पद छोड़ा तो जाते-जाते संघ की आलोचना कर गए। उन्होंने साफ कहा था कि पार्टीगत मामलों में संघ का हस्तक्षेप चुनावी सफलता पाने में बाधक हो सकता है।

आडवाणी राजनीति की शतरंज के शातिर खिलाड़ी रहे हैं। वो महसूस कर चुके हैं कि 2014 में भाजपा और उसके गठबंधन को देश की सत्ता पर काबिज़ होने में सफलता नहीं मिल सकती। उन्होंने काफी पहले ही यह साफ-साफ कह दिया था। भाजपा के पास ऐसा कोई मुद्दा ही

नहीं है, जिसे वह चुनावों में झुनझुने के तरह बजा सकें। आडवाणी के इर्द-गिर्द भाजपा के कुछ नेता खड़े हैं। आडवाणी को यह अच्छी तरह पता हो चुका है कि किसी भी हाल में वे अब प्रधानमंत्री नहीं बन सकते। शायद यही वजह है कि एक तरह से राजनीति से उनका मोह भंग हो चुका है। आडवाणी भले ही साम्प्रदायिक नेता रहे हों और 90 के दशक में रामरथ यात्रा कर और राममंदिर आन्दोलन को मुद्दा बना साम्प्रदायिक दंगे भड़काने में भूमिका निभाई हो, पर उन्हें भ्रष्ट नहीं कहा जा सकता। आडवाणी को सत्ता-संचालन का अच्छा अनुभव रहा है। इमरजेंसी के बाद जनता पाटी के शासन के दौरान वे कैबिनेट मंत्री थे, फिर राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन की सरकार में अहम स्थान पर रहे। वे शासन की रग-रग से वाकिफ़ हैं, पर बदली हुई परिस्थितियों ने और बढ़ती उम्र ने उन्हें किनारा कशी करने को मजबूर कर दिया है। जो भी हो, उनका एक प्रभामंडल तो है ही और वे मोदी एवं उनके समर्थकों के लिये चुनौती बन सकते हैं।

जहां तक भाजपा अध्यक्ष राजनाथ सिंह का सवाल है, गडकरी के खास माने जा रहे हैं, पर आडवाणी गुट के खिलाफ़ कुछ खासकर पाना उनके वश की बात नहीं। भाजपा के भीतर भटकाव, टकराव के साथ ही साथ बिखराव भी है। उसका गठबंधन अब महज कहने भर को है। जद (यू) उससे कटता चला जा रहा है। कभी भी साथ छोड़ सकता है। नरेन्द्र मोदी को पचा पाना असंभव है उसके लिये। मुस्लिम वोटों का सवाल है। मोदी की छवि मुसलमानों के बीच दैत्य के समान है और बजरंगियों का जमाना लद गया।

नरेन्द्र मोदी की ख़्वाहिश है कि वे उत्तर प्रदेश से चुनाव लड़ अपनी अखिल भारतीय छवि बनायें। उनके प्यादे चुनाव क्षेत्र की तलाश में लग गए हैं। मोदी की लोकप्रियता स्थापित कराने के लिये सर्वे कराये जा रहे हैं। अगर मोदी यूपी से चुनाव लड़ते हैं तो यह उनकी बहुत बड़ी भूल होगी- एक तरह से आत्मघाती कदम होगा उनके लिए। यूपी में समाजवादी पार्टी, बहुजन समाज पाटी और कांग्रेस के बीच मुख्य मुकाबला होगा। अखिलेश यादव ने अपने कारनामों की वजह से सपा की लुटिया डुबो दी है। हालिया बरसों में यूपी में गुंडा सरकारों का बोलबाला रहा है। अखिलेश यादव की सरकार महागुंडा सरकार है। मायावती के लिये चांस बराबर है।

जहां तक कांग्रेस का सवाल है, सोनिया, मनमोहन और राहुल की हालत पतली है। 'युवराज' राहुल तो पीठ दिखा भागते प्रतीत हो रहे हैं। अभी भी प्रधानमंत्री बनने को तैयार नहीं। ज़िम्मेदारियों से मुंह मोड़नेवाले राहुल की वजह से सोनिया बहुत परेशान हैं, पर राहुल इतने बेवकूफ नहीं। वे समझ चुके हैं कि राजनीति की पेचदार राह उनके लिए नहीं। सो धीरे-धीरे किनाराकशी करते चले जा रहे हैं।

बहरहाल, अगर मोदी इस देश का प्रधानमंत्री बनने की सोच रहे हैं तो यह उनकी ख़ामख्याली ही है। पूंजीपतियों के दुमछल्ले, विकास की बातें कर जनता को गुमराह करने की कोशिश में लगे मोदी के गुजरात में आम लोगों की हालत बड़ी पतली है। गांवों में ग़रीब किसानों को दो जून भोजन मिल पाना कठिन हो रहा है। और मोदी सैंकड़ों करोड़ खर्च कर अपने लिये बुलेटप्रूफ ऑफिस तैयार करवा रहे हैं। देश की राजनीति में क्षेत्रीय गुंडावाद हावी है। मोदी को समझना चाहिए कि उत्तर भारत में सफलता प्रधानमंत्री बनने के लिये जरूरी है। और मोदी के नाम से मुसलमान भड़कते हैं, जिनके वोट जीत के लिये बहुत मायने रखते हैं। इसलिए, मोदी अपने 'स्वर्ग' गुजरात में ही रहें तो उनके लिये बेहतर होगा। ■

गुंडे, लुटेरे, जमूरे

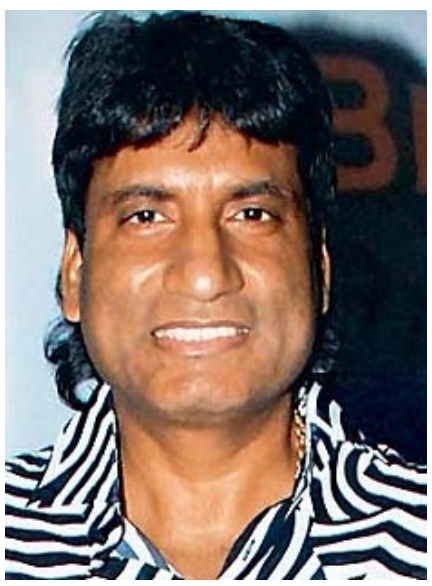

सोनिया-मनमोहन सरकार को समर्थन दे रहे 'भूमिपुत्र' मुलायम इस्पात मंत्री बेनी प्रसाद को मंत्रिमंडल से हटवाने के लिये अड़ गये। बेनी ने भरी सभा में कहा था- मायावती तो लूटेरी थी, यह (मुलायम)लुटेरा भी है, गुंडा भी। यानी हद ये हो गई कि अब एक नेता दूसरे नेता को खुलेआम लुटेरा और गुंडा कहने लगा बेहिचक। इससे ये बात तो साफ़ हो गई भारतीय लोकतंत्र बेलौस और बेबाक हो गया है। यह लोकतंत्र के स्वास्थ्य के लिये अच्छा है।

बेनी प्रसाद पहले मुलायम के साथ ही थे। एक अमर सिंह भी थे। अमर सिंह को बदनामी-नेकनामी की कोई फिक्र नहीं; पर नेता जी बदनाम हो गए। टेलिफोन टैपिंग में बॉलीबुड हीरोइनों से कनेक्शन स्थापित हो गया। अमर सिंह को सफाई देनी पड़ी। इशारा काफ़ी है। बात बदनामी वाली है। पहले राज बब्बर अलग हुए। अमर सिंह गए तो जया प्रदा ने भी पल्लू छुड़ा लिया। जया भादुड़ी साथ हैं। बड़ी बात है। अमर सिंह के जाते छोटे अंबानी भी चले गए। बॉलीवुड कनेक्शन को बड़ा झटका लगा।

इधर बेनी खुलेआम लुटेरा और गुंडा कहने लगा। यूपी में उनके राज को पहले भी गुंडाराज कहा गया। लोकतंत्र में ऐसा कहा जाना बहुत बुरी बात है। उनके गुरु डॉ. लोहिया ने भी कभी बड़े से बड़े विरोधी नेता को गुंडा नहीं कहा, जोकर-वोकर कह दिया, अलग बात है। और जनता तो लुटेरा कहे, कुछ भी कहे, एक नेता दूसरे नेता को ऐसा कहे! ये तो हद है।

अब यूपी में उनके सुपुत्र अखिलेश के राज को महागुंडा राज कहा जा रहा है। पर अखिलेश का कोई अपना ही ये कहे तो कैसा लगे।

मुलायम पहलवान हैं। इन्हें दांव-पेंच पता हैं। इन्होंने राजू श्रीवास्तव को खड़ा कर दिया। टीवी के चुटकुलेबाज को टिकट देने का वादा कर दिया। उसने भरी सभा में खुलेआम कह दिया - बेनी प्रसाद शराब के नशे में होंगे। नशे में आदमी कुछ भी कह जाता है। कोई बात नहीं।

लोगों ने सोचा, भला ये चुटकुला है। राजू श्रीवास्वत जीतेगा। संसद में जाएगा। वहाँ चुटकुले सुनाएगा। मुलायम के पास से हीरो बिदककर चले गए तो उन्होंने एक जमूरा ही पकड़ लिया। लोकतंत्र में लुटेरों और गुंडों के साथ जमूरों का होना बहुत जरूरी है। पहले भी जमूरे हुआ करते थे। अब नए किस्म के जमूरे आ रहे हैं। भारतीय लोकतंत्र की शान हैं गुंडे, लुटेरे और जमूरे!

- ग़रीबदास

...क्योंकि वह संजू बाबा है

1993 में मुंबई के सामूहिक नरसंहार के मुकदमे में दोषी पाए गए संजय दत्त को केवल 5 साल की सज़ा-ए-कैद भी कुछ लोगों को हजम नहीं हो पा रही है। जया भादुड़ी बच्चन ने तो इस पर तिलमिलाते हुए इसे 'रबिश' बताया और कहा कि पिछले 20 साल से क्या सरकार सो रही थी जो इतने दिन बाद सज़ा सुनाई। क्या बेतुका तर्क है जया का। यदि 20 साल पहले ही सज़ा दे दी जाती तो कहती क्या तरीका यह है यह बिना कोई सुनवाई के सज़ा दे डाली। जया तो चलो मनोरंजन एवं ग्लैमर की उसी दुनिया से आती हैं जिस से संजय आता है। उनकी तर्क-विहीन सोच को नज़र अंदाज भी किया जा सकता है; लेकिन जस्टिस काटजू का क्या करें जो खुद सर्वोच्च न्यायालय के जज रह चुकने के बाद कि संजय दत्त को माफ़ करने के लिये महाराष्ट्र के राज्यपाल को पत्र भी लिख चुके हैं और मिलने भी जायेंगे यदि उन्होंने समय दे दिया तो।

इनके अलावा कुछ राजनीतिक दल भी संजय के हक में खड़े हो कर राजनीतिक लाभ उठाने के भुलावे में ऐसे ही बेसुरे राग अलाप रहे हैं। इनमें अब चौटाला पार्टी के नेता भी शामिल हो गये है। वैसे, इन्हें भी इस समय सजा से माफ़ी की सख्त जरूरत है। संजय की पक्ष में बोलने वाले तर्क देते हैं कि वह 18 माह की सज़ा तो पहले ही काट चुका है अब और सज़ा की क्या जरूरत है? उसने अभी कुछ वर्ष पहले ही (दूसरी) शादी की है, उसके दो बच्चे भी हैं, वह बहुत बड़ा कलाकार है, उसके जेल जाने से फ़िल्म उद्योग का सैंकड़ों करोड़ रुपया डूब जायेगा, उसने जमानत पर रिहा होने के बाद जनहित में बहुत बड़े बड़े काम किये हैं। अब वह बिल्कुल सुधर गया है। उसके पिता सुनील दत्त ने देश के लिये बहुत कुछ किया था आदि-आदि।

ये सभी तर्क पूर्णतया आधारहीन हैं। शादी करना, बच्चे संभालना, अपना काम-धंधा सभी करते हैं। संजय ने कुछ भी न्यारा अथवा अनोखा नहीं किया। जमानत मिलने के बाद ग्लैमर व ऐयाशी की दुनिया में रह कर अथाह पैसा कमाने का जो अवसर उसे मिला है, उसके लिये उसे शुकरगुज़ार होना चाहिये। सर्व-विदित है कि यह अवसर भी उसे सरकार व न्यायपालिका ने पक्षपातपूर्ण तरीके से दिलवाया। यह मानना बिल्कुल ग़लत है कि 1993 के नरसंहार के दौरान केवल शस्त्र अधिनियम के तहत अवैध शस्त्र रखने का सामान्य दोषी है। एके 56 जैसी रायफ़ल जो उस वक्त पुलिस के पास भी नहीं होती थी, उसे अपने घर पर रखना और वह भी एक नहीं तीन, भारी मात्रा में उनके कारतूस हैंड ग्रेनेड, 9 एम एम का पिस्टल उसने बम कांड गिरोह से ही प्राप्त किये। पुलिस रेड की भनक लगने पर इनमें से 2 रायफ़लें तो संजय ने नष्ट करवा दी, जिनके अवशेष पुलिस ने बरामद किये थे। उक्त अवैध हथियारों के अलावा इसके पास तीन लाइसेंसी हथियार पहले से ही मौजूद थे। इसके बावजूद उसे इतने सारे अवैध हथियारों की जरूरत क्यों पड़ी? यह एक गंभीर प्रश्न है। क्या गांव के लोहार का बनाया हुआ कट्टा और ए के-56 या इससे भी खतरनाक एक या अनेक हथियार रखना शस्त्र अधिनियम के अन्तर्गत समान अपराध है? दोनों स्थितियों में ज़मीन-आसमान का फ़र्क है। लोहार के बनाये कट्टे से छोटी-मोटी वारदात ही संभव होती है, जबकि संजय से बरामद हथियार एक बहुत बड़ी वारदात का हिस्सा थे। इस बात की पुष्टि इससे भी होती है कि दाउद के जिन साथियों से उक्त हथियार प्राप्त हुए थे, उन सब से (दाऊद) समेत इसका मिलना-जुलना तथा फ़ोन पर वार्तालाप एक आम बात थी। इस लिये यह कदाचित नहीं माना जा सकता कि संजय को इस बात का ज्ञान नहीं था कि दाऊद गिरोह की कितरत क्या थी? पुलिस ने अन्य आरोपियों के साथ उसे टाडा में पकड़ कर बिल्कुल सही किया था और ट्रायल कोर्ट उसे जमानत न दे कर भी ठीक ही कर रही थी; लेकिन भ्रष्ट राजनेताओं ने तरह-तरह के दबावों के चलते उस पर से टाडा हटा कर उसकी जमानत का मार्ग प्रशस्त कर दिया था। टाडा हटाने के बाद उस पर से नरसंहार के सभी आरोप हट कर केवल शस्त्र अधिनियम का ही आरोप बचा रह गया था। इसी आरोप में ट्रायल कोर्ट ने उसे 6 वर्ष की सज़ा दी थी। उसके गुनाहों को समग्र रूप में देखें तो यह सज़ा ठीक थी। अब जब सर्वोच्च न्यायालय ने घटाकर सज़ा 5 साल कर दी है, इस पर भी हो-हल्ला मचाया जा रहा है। मजे की बात तो यह है कि हो-हल्ला मचाने वाले भी वही लोग हैं जो जनसाधारण को बहकाने के लिये दिन-रात कहते रहते हैं कि कानून सब के लिये बराबर है। न्याय प्रणाली सबको समान दृष्टि से देखती है। वैसे तो यह प्रणाली ग़रीब को कभी भी न्याय नहीं दे पायी परन्तु संजय दत्त जैसे मौजूदा कांड यदा-कदा इस प्रणाली को नंगा करने के लिये सामने आते ही रहते हैं।